रामचन्द्रिका के संवाद

पात्रों के मध्य जो वार्ताएँ होती हैं, उन्हें संवाद कहते हैं। संवादों से काव्य की कथावस्तु का प्रसार होता है, पात्रों के चरित्र का विकास होता है और कथावस्तु में रोचकता एवं मनोहारिता आती है। अतः संवादों की निम्नलिखित तीन विशेषताएँ मानी गई हैं—

1. वे काव्य की कथावस्तु की अभिवृद्धि करें।
2. वे काव्य में वर्णित पात्रों के चरित्र-विकास में सहायक हों।
3. वे काव्य की कथावस्तु को रोचक एवं ग्राह्य बनायें।

कथावस्तु की अभिवृद्धि में संवादों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। यहाँ तक कि यदि लेखक चाहे तो वह अपने काव्य की समस्त कथा को संवादों में ही व्यक्त कर सकता है। संवादों से पात्रों के चरित्र का भी विकास होता है। इसलिए चरित्र-चित्रण की अनेक विधाओं में से संवादों की योजना भी एक विधा मानी गई है। किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व का बहुत-कुछ बोध उसकी वाणी से अथवा वाणी को व्यक्त करने के ढंग से हो जाता है। अपने विषय में तथा दूसरों के विषय में कुछ कहने-सुनने की प्रवृत्ति मानव में संस्कारगत है, अतः संवाद में वक्ता अपने ही नहीं, दूसरों के चरित्रों पर भी पर्याप्त प्रकाश डालता है। संवादों से कथावस्तु की एकरसता नष्ट हो जाती है और उसमें विविधरसता आ जाती है; अर्थात् कथावस्तु की नीरसता नष्ट हो जाती है और उसके स्थान पर सरसता आ जाती है।

संवादों की उपर्युक्त विशेषताओं के आधार पर उन्हीं संवादों को प्रभावशाली माना जाता है जो स्वाभाविक तथा वक्ता की मनोदशा के अनुकूल हों। उनमें हृदय की स्थिति के अनुकूल ही शब्दों की संयोजना की गई हो। वे स्वाभाविक एवं नाटकीय हों। इन्हीं आधारों पर हमें रामचन्द्रिका के संवादों का पर्यवेक्षण करना चाहिए।

रामचन्द्रिका में कुल मिलाकर 9 संवाद हैं—

1. सुमति-विमति-संवाद, 2. रावण-बाणासुर-संवाद, 3. राम-परशुराम-संवाद, 4. राम-सीता-संवाद, 5. राम-लक्ष्मण-संवाद, 6. शूर्पणखा-राम-संवाद, 7. सीता-रावण-संवाद, 8. सीता-हनुमान-संवाद, 9. रावण-अंगद-संवाद।

विस्तार की दृष्टि से इन संवादों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है—संक्षिप्त संवाद और विस्तृत संवाद। संक्षिप्त संवादों के अन्तर्गत शूर्पणखा-राम-संवाद, सीता-रावण-संवाद, सीता-हनुमान-संवाद आदि और विस्तृत संवादों के अन्तर्गत रावण-बाणासुर-संवाद, राम-परशुराम-संवाद, रावण-अंगद-संवाद आदि आते हैं।

शूर्पणखा-राम-संवाद

जब राम पंचवटी में अपनी पर्णशाला बनाकर रहने लगते हैं तो रावण की बहिन शूर्पणखा राम को देखकर उनके रूप पर मोहित हो जाती है और उनके पास जाकर कहती है–

'किन्नर हौ नर रूप, बिचच्छन जच्छ कि स्वच्छ सरीरन सोहौ।
चित्त चकोर चंद किधौं मृगलोचन चारु विमानन रोहौ।।
अंग धरे कि अनंग हौ केसव अंगी अनेकन के मन मोहौ।
बीर जटान धरे धनुबान लिये बनिता वन-मैं तुम को हौ।।'

शूर्पणखा के ये शब्द अत्यन्त स्वाभाविक और मनोवैज्ञानिक हैं। शूर्पणखा काम से पीड़ित है, अतः राम के रूप की प्रशंसा करना बहुत ही स्वाभाविक है। साथ ही, वह राम को अपने जाल में फँसाना चाहती है और इसके लिए प्रशंसा को छोड़कर और कोई मार्ग नहीं है। इस चातुरी से भरे हुए प्रश्न का राम भी चातुर्यपूर्ण उत्तर देते हैं–

'हम हैं दसरत्थ महीपति के सुत। सुभ राम सु लच्छन नामक संजुत।
यह सासन दै पठये नृप कानन। मुनि पालहु घालहु राच्छस के गन।।'

अपना परिचय देने के साथ-साथ राम वन में आने का अपना प्रयोजन भी बता देते हैं–मुनियों की रक्षा और राक्षसों का नाश। इस प्रयोजन से वे प्रकारांतर से शूर्पणखा को सूचित कर देते हैं कि तुम क्योंकि राक्षसराज रावण की बहिन हो, जिसे मारना मेरा प्रयोजन है, अतः मेरा और तुम्हारा किसी भी प्रकार सम्बन्ध नहीं हो सकता।

इस संवाद से शूर्पणखा और राम के चरित्र पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है।

रावण-सीता-संवाद

रावण सीता का अपहरण करके उसे लंका तो ले जाता है, किन्तु उसके मन को वशीभूत नहीं कर पाता, फलतः वह राम की बुराई करके सीता को उनसे विमुख करना चाहता है। वह राम की बुराई करता हुआ कहता है–

'कृतघ्नी कुदाता कुकन्याहि चाहै। हितू नग्न मुंडीन ही को सदा है।।
अनाथैं सुन्यौ में अनाथानुसारी। बसै चित्त दंडी जटी मुंडधारी।।
तुम्हैं देवि दूषै हितू ताहि मानै। उदासीन तो सो सदा ताहि जानै।।
महा निरगुणी नाम ताको न लीजै। सदा दास मो पै कृपा क्यों न कीजै।।

रावण के ये शब्द उसकी नीति-कुशलता एवं मनोवैज्ञानिक ज्ञान के परिचायक हैं। मनोविज्ञान के अनुसार जिस वस्तु से किसी प्राणी को उदासीन करना हो तो उसके

समक्ष उस वस्तु की जो खोलकर बुराई करनी चाहिए। इसीलिए रावण सीता के सामने राम की बुराई करता है और यहाँ तक कह देता है कि उस महा निर्गुणी का तो नाम भी नहीं लेना चाहिए। रावण की इन कुशलतापूर्ण बातों का उत्तर सीता भी उसी कुशलता से देती हैं—

'अति तनु धनु रेखा नेक नाकी न जाकी।
खल सर खर धारा क्यों सहै तिच्छ ताकी।।'

रे दुष्ट! जिस राम के धनुष की पतली-सी रेखा भी तुम नहीं लाँघ सके, उसके तीक्ष्ण बाणों के प्रहार को तुम किस प्रकार सहन कर सकोगे। अर्थात् राम ऐसे नहीं हैं, जैसे तुम बता रहे हो और वह समय दूर नहीं जब वे तीक्ष्ण बाणों से तुम्हारा संहार कर देंगे। इस उत्तर से सीता की अपने पति के प्रति आस्था प्रकट होती है। यही उनके चरित्र की महत्ता है।

सीता-हनुमान-संवाद

सीता की खोज करते-करते जब हनुमान लंका-स्थित अशोक वाटिका में पहुँच कर सीता को देखते हैं तो वहीं सीता और हनुमान का संवाद होता है। सीता हनुमान से जो प्रश्न इस अवसर पर करती हैं उससे सीता की बुद्धिमत्ता स्पष्टतः प्रकट हो जाती है। वे एकदम हनुमान का विश्वास नहीं कर बैठतीं, वरन् उससे अनेक प्रश्न पूछती हैं और जब उन्हें पूर्ण विश्वास हो जाता है तब वे हनुमान से अपने मन की बातें प्रकट करती हैं तथा राम के लिए संदेश भेजती हैं। सीता-हनुमान के संवाद से कथा प्रवाह पर कोई प्रभाव नहीं होता, बल्कि इससे सीता और राम के चरित्र पर पूर्ण प्रकाश पड़ता है।

राम-सीता-संवाद

जब राम वन-गमन की तैयारी करते हैं तो वे सीता के पास जाते हैं और सीता से कहते हैं कि मैं तो वन जा रहा हूँ, अतः तुम अपनी इच्छा के अनुकूल चाहे अयोध्या में रहो और चाहे जनकपुरी चली जाओ। सीता उत्तर देती हैं—

'न हौं रहौं न जाँहू जू बिदेह-धाम को अबै।
कही जु बात मातु पै सु आजु मैं सुनी सबै।।
लगै छुधाहि मां भली बिपत्ति मांझ नारिये।
पियास-त्रास नीर बीर युद्ध में संभारिये।।'

इससे सीता के महान् चरित्र का उद्घाटन होता है। जो अपने पति के साथ रहने में ही सर्वोत्तम सुख मानती हैं।

राम-लक्ष्मण-संवाद—राम-सीता-संवाद की भाँति राम-लक्ष्मण-संवाद भी बहुत छोटा है। राम लक्ष्मण को आदेश देते हैं कि वह अयोध्या में ही रहें और भरत की प्रत्येक नीति को शान्तिपूर्वक सहन करते रहें। इसके उत्तर में लक्ष्मण कहते हैं—

'सासन मेटो जाय क्यों, जीवन मेरे हाथ।
ऐसी कैसे बूझिये, घर सेवक बन नाथ।।'

अर्थात् यदि आप मुझे अपने साथ चलने की आज्ञा न देंगे तो मैं आत्महत्या कर लूँगा। राम-लक्ष्मण-संवाद से राम और लक्ष्मण के चरित्र पर प्रकाश पड़ता है। राम नहीं चाहते कि भाइयों में किसी प्रकार का विरोध उत्पन्न हो जाये। यह उनकी महानता है। लक्ष्मण का राम के प्रति इतना अगाध प्रेम है कि वे वन जाने की अनुमति न मिलने पर आत्महत्या करने के लिए उतारू हो जाते हैं।

सुमति-विमति-संवाद—विस्तृत संवादों में सर्वप्रथम सुमति और विमति का संवाद आता है। ये दोनों राजा जनक के चारण हैं और सीता-स्वयम्बर में आये हुए राजाओं का परिचय देते हैं। इनके संवाद से कथाप्रवाह में कोई वृद्धि नहीं होती, केवल इतना पता चलता है, कि किस-किस देश से कौन-कौन राजा सीता के स्वयम्बर में भाग लेने के लिए आये हैं और उन राजाओं की क्या विशेषताएँ हैं। हाँ, कथावस्तु में रोचकता लाने में इस संवाद का महत्वपूर्ण योगदान है।

सुमति विमति से पूछता है—

'को यह निरखत आपनी, पुलकित बाहु बिसाल।
सुरभि स्वयम्बर जनुकरि, मुकुलित साख रसाल।।'

विमति उत्तर देता है—

'जेहि जस परिमल मत्त, चंचरीक चारन फिरत।
दिसि बिदिसिन अनुरत्त, सु तौ मल्लिका पीड़ नृप।।'

प्रश्नोत्तर की यह शैली रामचन्द्रिका की कथावस्तु में नाटकीयता उत्पन्न कर देती है जिसके कारण कथावस्तु अधिक रोचक और मनोहारिणी बन जाती है।

रावण-बाणासुर-संवाद—रावण-बाणासुर-संवाद काफी विस्तृत है। यह 31 छन्दों में समाप्त हुआ है। इस संवाद में नाटकीयता के साथ-साथ व्यंग्य और ध्वनि की प्रधानता है। कुछ आलोचकों का मत है कि रावण और बाणासुर का संवाद अनावश्यक-सा प्रतीत होता है और यदि यह निकाल दिया जाये तो ग्रंथ के मुख्य कथानक पर कोई प्रभाव न पड़ेगा। हमारी सम्मति में यह संवाद इतनी कुशलता से संयोजित किया गया है कि इससे कवि ने अनेक प्रयोजन सिद्ध किये हैं। यथा—पात्रों के चरित्र का विकास, अन्तर्कथाओं की सूचना कथावस्तु की प्रवाहमयता और कथावस्तु की रोचकता आदि।

रावण और बाणासुर के संवादों को देखकर इस बात का पता चल जाता है कि दोनों ही वीर हैं। जब बाणासुर शिव-धनुष की महत्ता का बखान करता है तो रावण इन शब्दों में उत्तर देता है–

'बज्र को अखर्ब गर्व गंज्यो जेहि पर्वतारिं,
जीत्यो है सुपर्व सर्व भाजै लै लै अंगना।
खंडित अखंड आसु कीन्हों है जलेस पासु,
चन्दन-सी चंद्रिका सों कीन्हों चंद-बंदना।
दंडक मैं कीन्ही कालदण्डह को मान खण्ड,
मानो कीन्ही काल ही की काल खंड खंडना।
केसव कोदण्ड विषदंड ऐसौ खडै अब,
मेरे भुज दण्डन की बड़ी है विडम्बना।'

इस छन्द से दो प्रयोजन स्पष्ट हैं–रावण का चरित्र तथा उससे सम्बन्धित अनेक अवान्तर कथाएँ। इसी प्रकार–

'कैटभ सो नरकासुर सो पल मैं मधु सो मुर सो जेइ पार्‌यो।
लोक चतुर्दस रच्छक केसव पूरन देव पुरान बिचार्‌यो।
श्री कमला कुच कुंकुम मण्डन मंडित देव अदेव निहार्‌यो।
सो कर माँगन को बलि पै करताहर को करतार परसार्‌यो।।'

इस छन्द में बाण के पिता बलि का परिचय है। इससे बाण की वीरता का तो पता चलता ही है कि वह वीर-पिता का पुत्र है, साथ ही इससे कथानक में भी अभिवृद्धि होती है। अपने विषय में रावण और बाणासुर के द्वारा कही गई बातों से जहाँ उनके चरित्र का विकास होता है वहाँ अवान्तर कथा की सूचना के रूप में मुख्य कथा के प्रवाह में भी वृद्धि होती है।

व्यंग्यात्मकता इस संवाद की प्रमुख विशेषता है। रावण पर व्यंग्य करता हुआ बाण कहता है–

'बहुत बदन जाके। बिबिध वचन ताके।'

रावण भी ऐसी ही शब्दावली में उत्तर देता है–

'बहुभुज युत जोई। सबल कहिय सोइ।

अर्थात् यदि बाण रावण को बकवाद करने वाला बताता है तो रावण भी उसे कायर कहता है। शब्दों के दाँव-पेच में दोनों में कोई कम नहीं है। दोनों अपनी तथा अपने वंश की प्रशंसा करके एक-दूसरे को नीचा दिखाना चाहते हैं। आपसी विवाद जब पूर्वजों की, विशेषतः पिता की ओर बढ़ने लगता है तो वह बहुत ही मनोरंजक बन जाता है। रावण ऐसा ही तीक्ष्ण बाक्प्रहार बाणासुर पर करता है–

'तुम प्रबल जो हुते। भुज बलनि संजुते।।
पितहि भुव ल्यावते। जगत जस पावते।।'

अर्थात् यदि तुम इतने बलवान थे तो अपने पिता को, जो पाताल में सड़ रहा है, पृथ्वी पर क्यों नहीं लाये? इस तीक्ष्ण प्रहार का उत्तर बाण भी मर्मभेदिनी शब्दावली में देता है–

'पितु आनिये कोई ओक। दिय दच्छिना सब लोक।।
यह जानु रावन दीन। पितु ब्रह्म के रस लीन।।'

अर्थात् मेरे पिता ने तो सब भूमि दान कर दी थी अतः वह फिर कैसे यहाँ पर आ सकते हैं और फिर वहाँ पर वे ब्रह्मानन्द में लीन हैं, तेरी तरह विषयानन्द की ओर नहीं दौड़े फिरते।

कहीं-कहीं इस संवाद में नाटकीयता अपनी चरम सीमा पर दिखाई देती है। यथा–

रावण–बान न बात तुम्हैं कहि आवै।
बाण–सोई कहौं जिय तोहि जो भावै।।
रावण–का करिहौ हम यों ही बरैंगे।
बाण–हैहयराज करी सौ करैंगे।।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि यह संवाद रामचन्द्रिका का प्राण है : किसी भी संवाद-योजना में जितने गुणों की अपेक्षा होती है, वे सब इसमें मिलते हैं।

राम-परशुराम-संवाद–जब राम सीता से विवाह करके बारात के साथ जनकपुरी से अयोध्या लौटते हैं तो मार्ग में परशुराम से भेंट हो जाती है। शिव-धनुष के टूट जाने के कारण परशुराम अत्यन्त क्रुद्ध हैं और जिस व्यक्ति ने उस धनुष को तोड़ा है, उसे दण्ड देने के लिए अत्यन्त आकुल हैं। इसीलिए वे सबसे पहले यह पूछते हैं कि धनुष को तोड़ने वाला व्यक्ति कौन है? जब उन्हें पता चलता है कि रघुवंशी राम ने उसे तोड़ा है तो एकदम समस्त रघुवंश का नाश करने के लिए वे उद्यत हो जाते हैं और राम को ताड़ना देते हैं। राम अत्यन्त विनीत भाव से कहते हैं–

'सो अपराध परो हम सों अब क्यों सुधरे तुमही तो कहौ।'

और परशुराम तुरन्त उत्तर देते हैं–

'बाहु दै दोऊ कुठारहि केसव आपने धाम को पंथ गहौ।'

राम शिव-धनुष के भंग को अपना अपराध स्वीकार नहीं करते। वे परशुराम को समझाते हैं कि यदि टूटने वाला वृक्ष टूट जाये तो इसमें वायु का कोई दोष नहीं होता–

'टूटै टूटनहार तरु वायुहि दीजत दोस।
त्यौं अब हर के धनुष को हम पर कीजत रोस।।'

अपने गुरु के गारिमामय धनुष की निन्दा सुनकर परशुराम आपे-से बाहर हो जाते हैं और अपने परशु को सम्बोधित करते हुए कहते हैं—

'केसव हैहयराज को मास हलाहल कौरन खाय लियो रे।
ता लगि मेद महीपन को घृत घोरि दियो न सिरानो हियो रे।।
मेरो कह्यौ करि मित्र कुठार जो चाहत है बहु काल जियो रे।
तौ लौं नहिं सुख जौं लग तू रघुबीर को स्रोन सुधा न पियो रे।।'

इन पंक्तियों से परशुराम का क्रोधी-स्वभाव मुखरित हो रहा है। वे क्रोधावेश में इतने पागल हो जाते हैं कि राम को छोड़कर अपने परशु से बातें करते लगते हैं। जब परशुराम का क्रोध अपनी चरम सीमा पर पहुँच जाता है तो राम तब भी विनीत शब्दों में उन्हें समझाते हैं—

'सुनि सकल लोक गुरु जामदग्नि। तप बिसिस अनेकन की जु अग्नि।।
सब बिसिस छाँड़ि सहिहौं अखंड। हर धनुष कर्‌यो जिन खंड-खंड।।

इन पंक्तियों में राम की सहनशीलता और विनीत भावना स्पष्ट रूप में परिलक्षित होती है, किन्तु फिर भी परशुराम का क्रोध शान्त नहीं होता। वे अहंभावना से परिपूर्ण होकर कहते हैं कि मेरे बाणों से गऊ, ब्राह्मण, स्त्री और नपुंसक ही बच सकते हैं, अर्थात् इस समस्त भूमंडल पर कोई भी ऐसा प्राणी नहीं है जो मेरे बाणों की चोट खाकर भी जीवित रह सके।

सारांश यह है कि संवाद अत्यन्त भावपूर्ण और मनोवैज्ञानिक हैं। परशुराम की शब्दावली में सर्वत्र अहंकार विद्यमान है और राम की शब्दावली में सहिष्णुता एवं विनय-भावना। इस संवाद से राम और परशुराम दोनों का चरित्र पूर्णरूप से उभर कर सामने आ गया है। लोकोक्ति, मुहावरों और व्यंग्यपूर्ण शब्द-योजना ने इस संवाद को अत्यन्त प्रभावशाली बना दिया है। गूढ़ता इस संवाद की प्रमुख विशेषता है।

रावण-अंगद-संवाद—रावण-अंगद-संवाद रामचन्द्रिका के समस्त संवादों में सबसे श्रेष्ठ और सफल है। रावण और अंगद दोनों ही अपनी व्यवहार-कुशलता एवं वचन-विदग्धता में एक-दूसरे से होड़ ले रहे हैं। जब अंगद रावण के दरबार में पहुँचता है तो रावण पूछता है—

'कौन हो? पठये सो कौने? ह्यां तुम्हैं कह काम है?'

इन तीनों प्रश्नों के उत्तर अंगद भी इसी क्रम से देते हैं—

'जाति बानर, लंकनायक-दूत अंगद नाम है।'

रावण फिर पूछता है—

'कौन है वह बाँधिकै हम देह पूँछ सबै दही?'

इस प्रश्न में रावण की नीति-कुशलता निहित है। यद्यपि वह जानता है कि हनुमान ने उसकी लंका को जलाकर राख कर दिया, तथापि ऐसा भोजा बनकर पूछ रहा है जैसे हनुमान का कार्य उसकी दृष्टि में कोई महत्व ही न रखता हो। इस नीति का अंगद भी उतनी ही कुशलता से उत्तर देता है–

'लंक जारि संहारि अछ गयो सो बात बृथा कहो।'

इस उत्तर से भावाभिव्यक्ति और भी सबल हो गई है। इसके स्थान पर यदि यह कहा जाता कि तुम झूठ बोल रहे हो, वह तो लंका को जलाकर अक्षयकुमार का भी वध कर गया था, तो इस कथन में इतना अधिक चमत्कार और प्रभावोत्पादकता न होती। ऐसी ही कुशलता एवं प्रभावोत्पादकता अंगद के इस उत्तर में भी है–

'लोक लाज दुर्‌यो रहै अति जानिए न कहां अबै।'

निम्नलिखित प्रश्नोत्तर बहुत ही स्वाभाविक, नीतिपूर्ण तथा वाग्विदग्धता से परिपूर्ण है–

'कौन के सुत? बालि के, वह कौन बालि? न जानिए।
काँख चांपि तुम्हैं जो सागर सात न्हात बखानिए।।
है कहां वह ? बीर अंगद देवलोक बताइओ।
क्यों गयौ? रघुनाथ बान बिमान बैठि सिधाइयो।।'

रावण भली प्रकार जानता है कि अंगद बालि का पुत्र है और बालि को राम ने मार दिया है, किन्तु अंगद को भड़काने के लिए ही वह ऐसे प्रश्न करता है। अंगद भी इन प्रश्नों का ऐसा मुँह तोड़ उत्तर देता है कि रावण को अपने प्रश्नों की दिशा बदलनी पड़ती है, अर्थात् वह प्रश्न न करके अपनी शक्ति एवं वीरता से अंगद को प्रभावित करने का प्रयास करता है–

'लोक लोकेस स्यों जो जु ब्रह्मा रचे, अपनी अपनी सीव सो सो रहें।
चारि बाहैं धरे बिस्नु रच्छा करैं, बात सांची यहै बेद बानी कहैं।
ताहि भ्रूभंग ही देव देवेस स्यों, बिस्नु ब्रह्मादि दै रुद्रजू संहरैं।
ताहि हौं छांड़ि कै पांय काके परौं, आज संसार तो पांय मेरे परैं।।'

किन्तु अंगद पर इसका कोई प्रभाव नहीं होता। वह राम की महिमा और रावण की दुर्बलता की अभिव्यक्ति इन शब्दों में करता है–

'सिंधु तर्‌यो उनको बनरा, तुम पै धनुरेख गई न तरी।
बांदर बांधत सो न बंध्यो, उन बारिधि बांधिकै बाट करी।
श्रीरघुनाथ प्रताप की बात, तुम्हैं दसकंठ न जानि परी।।
तेलहु तूलहु पूँछ जरी न जरी, जरी लंक जराइ जरी।।'

जब रावण यह देखता है कि अंगद बातों से नहीं मानेगा तो उसके मर्म-स्थल को छूने के लिए उसको बाण के वध की याद दिलाकर उसे भड़काने का प्रयत्न करता है—

'जो सुत अपने बाप को, बैर न लेइ प्रकास।
तासौं जीवत ही मर्‌यो, लोग कहैं तजि आस।।'

यह वचन रावण की व्यवहार-कुशलता और मनोवैज्ञानिकता के परिचायक हैं। जब अंगद पर इनका भी प्रभाव नहीं होता तो सुग्रीव आदि की बुराई करता है। राम की शक्तिहीनता का बखान करता है और अन्त में अपनी सेना देकर अंगद को अपने बाप का बदला लेने के लिए प्रेरित करना चाहता है। उसकी ये सारी कोशिशें निष्फल हो जाती हैं और अंगद उसके सिर का मुकुट लेकर उड़ जाते हैं।

'रावण-अंगद-संवाद में वाक्चातुरी, नीति-कुशलता और व्यवहार-कुशलता के अनेक पक्ष दृष्टिगोचर होते हैं। रावण अपने दौत्यकर्म का सफलतापूर्वक पालन करता है। दोनों ही अपने-अपने कर्मक्षेत्रों में अडिग और अचल रहते हैं। डॉ. हीरालाल दीक्षित के शब्दों में—

'रावण-अंगद-संवाद में दो प्रज्ञाशील, नीतिज्ञ, व्यवहार-कुशल वीर अपनी बुद्धि और व्यवहर-कुशलता का परिचय देते हैं। एक पराक्रमी राजा है, जिसके आतंक से स्वर्ग के देवता भी काँपते हैं और दूसरा युवराज है जिसके पिता ने रावण को भी अपनी कोख में दबा रखा था। रावण और अंगद दोनों ही मर्यादा का पूरा-पूरा ध्यान रखते हुए अपनी सामाजिक स्थिति के अनुकूल स्वाभाविक ढंग से बातचीत करते हैं। भाषा में कहीं भी शिथिलता नहीं है। बातचीत में पात्रों का नाम न होने पर भी सरलता से समझ में आ जाता है कि कौन किससे कह रहा है। रावण और अंगद दोनों ही बड़े चातुर्य से एक दूसरे पर व्यंग्य करते हुए प्रसंगानुकूल प्रतिपक्षी की हीनता और अपनी महत्ता दिखाते चलते हैं।'

इन संवादों से कथावस्तु के प्रवाह में अभिवृद्धि होती है, उसमें रोचकता और मनोहारिता आती है तथा रावण, अंगद, राम, हनुमान आदि अनेक पात्रों के चरित्र के अनेक पक्षों पर पूर्णरूप से प्रकाश पड़ता है।

अन्त में, यह बता देना भी आवश्यक है कि रामचन्द्रिका में संवाद-योजना का पूर्ण सफलता के साथ निर्वाह हुआ है। इन संवादों से कथावस्तु के प्रवाह को गति मिलती है, उसमें रोचकता एवं मनोहारिता का समावेश हुआ है और पात्रों के चरित्रों पर पर्याप्त प्रकाश पड़ा है। हिन्दी के महाकाव्यों में रामचन्द्रिका इस क्षेत्र में अद्वितीय एवं अप्रतिम है।